जैव विकास - 5 : संसार - स्वार्थियों का बाज़ार

माधव गाडगिल

सभी जीवधारी स्वयं का अस्तित्व बनाए रखने और अपनी संतति बढ़ाने का प्रयास करते रहते हैं। इस प्रक्रिया में कमाल का स्वार्थ भी उपजता है और असीम त्याग भी।

जैव विकास को गति और दिशा दोनों प्राकृतिक वरण की प्रक्रिया से मिलती हैं। प्रजनन के फलस्वरूप बनी प्रतिलिपियां (संतानें) अधिकतर पिछली पीढ़ी के समान होती हैं, किंतु यदा-कदा थोड़ी परिवर्तित भी होती हैं। ऐसी बदली हुई प्रतिलिपियों में जहां-जहां भिन्न गुणधर्म बनते हैं, और उन गुणधर्मों का इन प्रतिलिपियों के जीवित रहने और फलने-फूलने पर असर हो सकता है, वहां-वहां प्राकृतिक वरण की प्रक्रिया अपनी छाप छोड़ती है। अर्थात प्रकृति प्रजनन, आनुवंशिकता और विविधता के तिहरे औज़ार से चयन की प्रक्रिया को अंजाम देती है, सृष्टि को असीम विविधता से सजाती है।

इस लेखमाला के केन्द्र में जीवजगत है। आखिर जीवन क्या है? चुनिंदा सौ-डेढ़ सौ अणुओं का एक सहकारी संगठन। आरएनए के अणु इस संगठन में सबसे श्रेष्ठ हैं। जीवन के आरंभिक काल में आरएनए के अणु प्रजनन के लिए आवश्यक सूचना भी प्रदान करते थे और उस सूचना के आधार पर रासायनिक क्रियाओं का संपादन भी करते थे। विकास के अगले चरण में इन दो भूमिकाओं का विभाजन हुआ और सूचना देने का काम आरएनए के बड़े भाई डीएनए ने अपनाया, वहीं रासायनिक क्रियाओं को गति देने का कार्य प्रोटीन करने लगे। हर जीवधारी में सूचना के वाहक डीएनए के कई खंड होते हैं, जो उनकी आनुवंशिकता का मूल आधार होते हैं। इन खंडों को जीन्स कहते हैं। उदाहरण के लिए, मानव की हर कोशिका में तीस हज़ार अलग-अलग रचना वाले जीन्स होते हैं। जीवन की प्रक्रियाओं के दौरान इन जीन्स की नई-नई प्रतिलिपियां बनती रहती हैं। अतः ये जीन्स प्राथमिक स्तर के प्रजनक हैं। जीवन की सारी प्रक्रियाएं जीन्स को बनाए रखने और उनकी अधिक से अधिक प्रतिलिपियां बनाने का एक स्वार्थी प्रयास है।

कहते हैं कि मुर्गी एक साधन मात्र है जिसके ज़रिए अंडा और अधिक अंडे बनाता है। आधुनिक विज्ञान की भाषा में कहा जाए तो सारे जीवधारी जीन्स, यानी डीएनए के अणुओं से और अधिक डीएनए अणु बनाने के साधन हैं। अतः जीव जगत में कदम-कदम पर दिखाई देने वाली स्वार्थी प्रवृत्ति जीन्स के स्तर पर शुरू होती है। इसी का एक परिणाम यह होता है कि कई जीन्स कामचोरी करते हैं। पिछले कई वर्षों में मानव और कई अन्य प्रजातियों के सारे जीन्स के समूह का अध्ययन अणु-परमाणु के स्तर पर हो चुका है। यह पता चला है कि जीन-समूह के कुछ ही सदस्य सारी तकलीफें उठाते हैं। अन्य सभी मुफ्तखोर, आलसी हैं। सब उन्नत जीवधारियों की जीवन प्रक्रियाओं का संचालन पांच-दस, या अधिक से अधिक बीस-तीस प्रतिशत जीन्स करते हैं। शेष सब आवारा हैं। कष्ट उठाने वाले कुछ ही जीन्स की बदौलत ये मुफ्तखोर जीन्स स्वयं की प्रतिलिपियां बना-बनाकर अगली पीढ़ी में पहुंच जाते हैं। जीव जगत में इस प्रकार का स्वार्थ कई स्तरों पर देखा जा सकता है। हमारा शरीर करोड़ों कोशिकाओं से बना है। हर कोशिका अपनी स्वयं की प्रतिलिपि बना सकती है। आम तौर पर कोशिकाओं के विभाजन की यह प्रक्रिया पूरी तरह जीवधारी के नियंत्रण में होती है। किंतु कभी-कभी कीटनाशकों जैसे ज़हर के शरीर में प्रवेश कर जाने के कारण कुछ कोशिकाएं उत्तेजित हो जाती हैं और उनका बेकाबू विभाजन कैंसर को जन्म देता है।

किंतु जीव जगत में व्याप्त स्वार्थ जीवधारियों के स्तर पर अधिक स्पष्ट नज़र आता है। यह केवल कवि कल्पना है कि वृक्ष स्वयं धूप को सहते हुए दूसरों को छाया देते हैं। वृक्ष को स्वयं के लिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है इसलिए उसकी छाया धरती पर पड़ती है और वह अपने प्रतिस्पर्धियों को मात देने के लिए अधिक से अधिक ऊंचा होने का प्रयास करता है। किंतु स्वार्थ के उम्दा उदाहरण जंतु जगत में मिलते हैं। सुंदर आंखों वाला, सुनहरे रंग वाला, नज़ाकत के साथ चलने वाला चीतल एक सामाजिक जंतु है और इसीलिए उसकी सुंदरता अधिक नज़र आती है। इनके बड़े-बड़े झुंड हर शाम को मानव बस्ती के पास पठारों पर इकट्ठे हो कर रात का बसेरा इसलिए करते हैं कि यहां वे शिकारी जंतुओं से अधिक सुरक्षित रहते हैं।

जिस प्रकार ये झुंड मनुष्य का ध्यान आकर्षित करते हैं उसी प्रकार उनके शिकारियों यानी बाघों, तेंदुओं, जंगली कुत्तों का भी ध्यान आकर्षित करते हैं। चूंकि यह खतरा उनके सिर पर दिन-रात मंडराता रहता है अतः ये हिरण हमेशा सतर्क रहते हैं। थोड़ा भी शक होने पर वे कुक्-कुक् आवाज़ करते हुए खतरे का इशारा देते हैं, अगले पैरों के खुर ज़मीन पर पटकते हैं, पूंछ ऊपर करके पुट्ठों पर स्थित सफेद निशान लहराते हैं। शिकारी जंतु की आहट पाते ही ये सब मिलकर या तो अपने सींगों और खुरों की सहायता से उसका सामना करने के लिए तैयार हो जाते हैं या फिर वहां से तेज़ी से भाग निकलते हैं। चिंकारा, काले हिरण आदि प्रजातियां भागने में भलाई समझती हैं किंतु चीतलों के झुंड ऐसा नहीं करते। जंगली कुत्तों का झुंड आता दिखाई पड़ने पर सारे हिरण भागते हुए एक-दूसरे के पास आ कर जत्था बना लेते हैं। हर सदस्य दूसरे को धक्का देता हुआ जत्थे के बीचों बीच घुसने का प्रयास करता है। इस धक्कामुक्की में प्रेम या वात्सल्य आदि भावनाओं के लिए कोई स्थान नहीं होता। हर हिरण यह प्रयास करता है कि खुद को बचाने के लिए दूसरों को हटा कर अंदर घुस जाए। इसके पीछे एकमात्र उद्देश्य यह होता है कि स्वयं के आसपास दूसरे सदस्य हों ताकि मरना हो तो दूसरे मरें। इस मारामारी में आकार में बड़े और अधिक ताकत वाले नर

बीचों बीच पहुंच जाते हैं, मादाएं और बच्चे बाहर की ओर धकेल दिए जाते हैं और शिकारियों के शिकार बन जाते हैं।

काले मुंह के बंदर हिरणों के समान ही स्वार्थी होते हैं। ऐसे बंदरों के झुंड में एक बलवान नर बंदर की हुकूमत चलती है। झुंड की सारी मादाएं उसके हरम में होती हैं और ब्रह्मचारी बने रहना दूसरे नरों की मजबूरी होती है। किंतु ये ब्रह्मचारी अपनी मजबूरी को चुपचाप सहते नहीं हैं। वे झुंड के मुखिया से लगातार लड़ते-झगड़ते रहते हैं। कभी न कभी मुखिया कमज़ोर हो जाता है और लड़ाई हार जाता है, अपना पद खो बैठता है। उसका स्थान लेने वाले नए नर को अपनी संतति बढ़ाने की बहुत जल्दी रहती है। जब तक मादाओं के पास बच्चे होते हैं और वे उन्हें दूध पिलाती हैं तब तक वे कामोत्तेजना में नहीं आतीं। अतः इस प्रकार के सत्ता-पलट के बाद क्रूरता की पराकाष्ठा होती है। झुंड का नया सरगना ऐसी मादाओं का पीछा करता है, उनके बच्चों को छीन कर मार डालता है। फिर वे बेचारी मादाएं शीघ्र ही कामोत्तेजना में आ जाती हैं और नए सरगना के बच्चों को अपने पेट में पालने लगती हैं। ऐसे स्वार्थी नरों के क्रूर व्यवहार की आनुवंशिक प्रवृत्ति प्राकृतिक वरण के द्वारा अगली पीढ़ी में आ जाती है, फैलती रहती है।

किंतु इस सबके बावजूद हमारी दुनिया एकरंगी, एकांगी नहीं है। प्राकृतिक वरण की प्रक्रिया में से चरम स्वार्थ के साथ असीम स्वार्थ त्याग, निर्दयता के साथ दया और वात्सल्य जैसी विभिन्न प्रवृत्तियां उपजी हैं। यह कैसे हुआ, यह समझना जैव विकास का एक रोचक अध्याय है। उसका अध्ययन हम लेखमाला में आगे यथासमय करेंगे। ***(स्रोत फीचर्स)***